National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 245-247

भारतीय साहित्य में नारी–चित्रण की परम्परा

सुमन रानी
चौ0 देवी लाल विश्वविद्यालय, सिरसा।, भारत।

प्रस्तावना

नारी भगवान की ही अद्भुत कृति नहीं है, वरन् मानवों की भी अद्भुत सृष्टि है। मानव जाति की सभ्यता एवं सामाजिक विकास का मूल स्त्रोत नारी है। उसी के कारण संसार की सबसे अद्भुत संस्था गृह का जन्म हुआ, परिवार बने और समाज विकास का क्रम चला। समस्त विश्व की नारी मूल उद्भावनी शक्ति का प्रतीक है। सृष्टि के आदिकाल से 'कहा न तिरिया कर सके' और 'का न करै अबला प्रबल' के आधार पर नारी का महत्व अखण्ड रहा है। नारी के बिना पुरूष शक्तिविहीन है, नारी ही विश्व की शक्ति है और पुरूष का सम्पूर्ण व्यक्तित्व उसके गर्भ में विद्यमान है। आस्वाद्य, आस्वादन और आस्वादक, इन तीनों गुणों के कारण वह आकर्षण का केन्द्र भी है और आकर्षित भी होती है। नारी रूप में सुकुमारता, मादकता, मृदुता, वंशीकारिता, सुन्दरता, सरसता एवं आकर्षण नर से अधिक होता है, उसके यही गुण सृष्टि–वृद्धि के कारण हुए है। उसके दर्शन पाकर पुरूष का उत्साह बढ़ा है और उसके अंग–अंग में स्फूर्ति उत्पन्न हो गई।

नारी प्राणदात्री है। नारी की प्रेरणा पुरूष को महान कलाकार, महान कवि और महान उद्योगी बना सकती है। वह समाज में सरसता का संचार कर सर्जन कार्य को सुचारू रूप से संचालित करती है।

नारी प्राणदात्री है। नारी की प्रेरणा पुरूष को महान कलाकार, महान कवि और महान उद्योगी बना सकती है। वह समाज में सरसता का संचार कर सर्जन कार्य को सुचारू रूप संचालित करती हैं।

''प्राणी जगत में 'नारी' शब्द 'नर' के समानान्तर है। इसका प्रयोग स्त्रीलिंगवाची 'मादा–प्राणियों के प्रतीक रूप में होता है। किन्तु मानव समाज में 'नारी' शब्द इस सामान्य अर्थ में गृहीत नहीं हैं क्योंकि उसका स्थान नर से कहीं बढ़कर हैं। कोमलता, दृढ़ता, स्पृहा आदि गुण नर की अपेक्षा नारी में विशेष पाए जाते हैं। यही नहीं रूप–आकार, शरीर संगठन, कार्य व्यापार एवं जीवन यापन की विविध स्थितियों में नारी विधाता की उच्चतम परिकल्पना सिद्ध हुई हैं। पार्वती, गार्गी, सीता, सावित्री, महारानी लक्ष्मी बाई आदि नारियां इन्हीं आदर्शो की प्रमाण हैं।'' [1]

वास्तव में गृहस्थाश्रम की सफलता नारी पर आधारित है, इसलिए प्राचीन काल में नारी प्रतिष्ठित पद पर विराजमान थी। मनु ने भी अपने सामाजिक ग्रन्थ मनुस्मृति में लिखा है–

> ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता
> यत्रै तास्तु न पूज्यन्ते सर्वासतत्राफलाः क्रियाः।'' [2]

अर्थात् जिस कुल में स्त्रियों की पूजा होती है, उस कुल पर देवता प्रसन्न होते हैं और जिस कुल में इन (स्त्रियों) की पूजा (वस्त्र, भूषण और मधुर वचनादि) द्वारा आदर सत्कार नहीं होता, उस कुल में सब कर्म निष्फल होते हैं।

उपनिषदों में कहा गया है कि ''सृष्टि की सम्पूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गयी है।'' [3]

शतपथ ब्राह्मण के अर्न्तगत जीवन के हर क्षेत्र में नारी और पुरूष की समकक्षता का आख्यान करते हुए कहा गया है कि ''स्त्री और पुरूष दल के दो दलों की भांति हैं।'' [4]

रविन्द्र जी ने नारी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन बड़े सुन्दर शब्दों में किया है, ''नारी भगवान की अद्भुत कृति नहीं हैं, वरन् मानवों की भी अद्भुत सृष्टि है। मनुष्य निरन्तर अपने अंतरतम् से नारी को सौन्दर्य की विभूति से विभूषित करता है। कविगण स्वर्णिम कल्पना के धागों से उसके लिए जाल सा बुनते रहते हैं। चित्रकार उसके स्वरूप को उसके बाह्य सौन्दर्य को अमरत्व प्रदान करते रहते हैं। मानव हृदय की वासना ने सदैव नारी यौवन को ऐश्वर्य प्रदान किया हैं। नारी अर्द्ध नारी और स्वपन।'' [5]

प्राचीन और नवीन भारतीय कवियों ने समय–समय पर नारी के सम्बन्ध में अपने–अपने विचार प्रस्तुत किए है–

सुमित्रानंदन पंत

पंत जी ने भारतीय नारी के भीतर स्वर्ग और नरक दोनों के दर्शन किए हैं। जब नारी हृदय में नारी का सत् स्वरूप जागता है तो वह प्रसन्नतापूर्वक अपना पावन प्रेम बरसाती है, जिस प्रेम में केवल सेवा एवं समर्पण ही रहते है, किन्तु जब उसके भीतर प्रसुप्त दानव जाग उठता है तो वह अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए पुरूष को वासना के विनाशक गर्त में भी धकेल सकती है–

> ''यदि स्वर्ग कहीं है इस भू पर तो, वह नारी उर के भीतर।
> यदि नरक कहीं है इस भू पर तो, वह भी नारी के अंदर।।'' [6]

रामधारी सिंह दिनकर

दिनकर, नारी को विश्व के प्रति आकर्षण एवं विकर्षण दोनों को साधन मानते है। वह उनकी दृष्टि में धूप है तो छाया भी है। यदि किसी ने नारी को जानना हो तो वह नारियों के प्राण पढ़कर उसे जान सकता है और संसार से विरक्ति के लिए उससे बढ़कर दूसरा साधन नहीं–

> ''नारी शक्ति, नारी धूप छांव है,
> जानना हो विश्व को तो नारियों के प्राण पढ़ो
> भागना हो विश्व से तो नारी तेज नाव है।'' [7]

कबीर

कबीर जी भक्तिकाल के प्रमुख संतों में से एक है। ये नारी को भक्ति के मार्ग में एक रूकावट के रूप में देखते है। इन्होनें

अधिकतर नारी की निंदा की है –

''नारी की झाई परत, अंधा होत भुजंग,
कबीरा तिनकी कौन गति, नित नारी के संग'' [8]
''कामिनी सुन्दर सर्पिणी, जो छेड़े तेहि खाय।
जो गुरूचरन न राचिया, तिनके निकट न जाय।।'' [9]

नारी निंदा के साथ–साथ इन्होनें पतिव्रता नारी की प्रशंसा भी की है

''पतिव्रता मैली भली काली कुचिर कुरूप।
पतिव्रता के रूप पर वारौ कोटि सरूप।।'' [10]

तुलसी : भक्तिकालीन कवियों में तुलसीदास जी ने भी अधिकतर नारी की निंदा ही की है – ''ढ़ोल गंवार, शुद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।'' [10]

''सत्य कहहि नारी सुभाऊ। सब विधि अगहु अगाध दुराऊ।
निज प्रतिबिम्ब बसउ गहि जई। जानि न जाई नारी गति भाई।'' [11]

मति राम : रीतिकालीन कवि मतिराम ने अधिकतर नारी के सौंदर्य का चित्रण ही किया है –

''नैन जोरि मुख मोरि हंसि, नैसुक नेह जनाए।
लगि लैन आई, हिय मेरे गई लगाई।'' [12]

बिहारी : रीति सिद्ध कवि बिहारी ने भरी नारी के सौंदर्य का चित्रण ही अधिकतर किया है–

''ज्यों–ज्यों पावक लपट सी, पिहयो सौ लपटाति।
त्यों–त्यों छही गुलाब सौं, छतियां अति सियराति।'' [13]

मैथिलीशरण गुप्त – मैथिलीशरण गुप्त जी ने नारी को अबला कहकर पुकारा है। इन्होनें नारी की अत्यंत मार्मिक दशा का सुंदर चित्रण किया है–

''अबला जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध और आंखों में पानी।'' [14]

नरेन्द्र शर्मा : इन्होनें नारी की प्रशंसा की हैं। इन्होनें नारी को जाया और जननी आदि नामों से पुकारा है–

''नारी कृत्या, मृत्यु, उर्वषी जननी, जाया,माया।
क्षीर सिन्धु, धारिणी, तारिणी, महाशून्य की काया।'' [15]

केशव : केशव की नारी भले ही उदात्त मूल्यों से असम्पकृत हो, किन्तु उसका अपना व्यक्तित्व है। केशव ने नारी को भोग रूपा मानकर ही त्याज्य बतलाया है। उसके बिना भोगों का अस्तित्व नहीं है। उनके अनुसार नारी त्याग से सहज ही संसार के गठबंधन छूट जाते है और तभी वास्तविक परब्रह्म सुख की प्राप्ति होती है

''जहां भामिनी, भोग तंह, बिन भामिनी कहं भोग,
भामिनी छूटे, जग छूटै, जग छूटे सुख–योग।। [16]''

हिन्दी साहित्य में नारी का वर्णन मात्र नारी के प्रेमिका रूप मे न रखकर उसका विस्तार गृह और कुटुम्ब की लक्ष्मी भारतीय अर्धांगिनी के रूप में किया गया है। वैदिक साहित्य में पत्नी को पति के रूप में सर्वोपरि स्थान दिया गया है। इसका प्रमाण है ऋग्वेद का यह कथन कि ''पत्नी का घर है।'' [17] अथर्वेद में ''पत्नी को रथ की धूरी के समान गृहस्थ का मूलाधार कहा गया है।'' [18] ऋग्वेद में पत्नी को सारे परिवार के लिए कल्याणकारिणी कहा गया हैं। वेदों का स्पष्ट अभिमत है ''जिस घर में पत्नी नहीं, उस घर में दिन का निवास नहीं।'' [19]

मनुस्मृति में कहा गया है कि ''जिस कुल की बहू–बेटियां क्लेश पाती है, वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता हैं। किन्तु जहां पर इन्हें किसी तरह का क्लेश नहीं होता, वह कुल सब प्रकार से सुख–सम्पन्न रहा करता है।'' [20]

स्मृतिकारों से एक से अधिक पत्नीधारी पति को निन्दनीय माना गया है।'' [21]

पत्नी के आर्थिक अधिकार के सम्बन्ध में मनु का कथन है कि जो व्यक्ति अपनी पत्नी का भरण–पोषण न कर सके, उसे शासन की ओर से अर्थ–दण्ड दिया जाना चाहिए।

मनुस्मृति में कहा गया है कि पितरों का और हमारा स्वर्ग सब पत्नी के अधीन हैं'' [22] मनु के कथानुसार 'पत्नी पूज्या है, उसी की प्रसन्नता में परिवार की प्रसन्नता निहित है और उसके दुःख में समूचे परिवार के दुःखी होने की स्थिति होती है।'' [24]

''पत्नी सारे घर की नियामिका और व्यवस्थापिका है।'' [25] जिस प्रकार समुद वर्षा करके नदियों पर साम्राज्य प्राप्त करता है, उसी प्रकार पत्नी पति के घर जाकर वहां की साम्राज्य प्राप्त करता है, उसी प्रकार पत्नी पति के घर जाकर वहां की सम्राज्ञी बनती है।'' इसका अभिप्राय यह है कि जैसे समुद्र नदियों का राजा है और नदियां सम्पूर्ण जल सम्पति उसे समर्पित करती है, वैसे पत्नी गृह स्वामिनी है और परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा अर्जित सम्पति उसी को समर्पित की जानी चाहिए।

अतः कुल के हिताभिलाषी पिता, भ्राता एवं परिवार के अन्य सदस्यों को सदा गृहणियों का आदर करना चाहिए।'' [26]

पति को सदेव पत्नी के प्रति भद्र व्यवहार करना चाहिए। उसका कर्तव्य है कि वह प्रत्येक कार्य में पत्नी से परामर्ष करें। पति अपने हित और अहित के विचार के उपरान्त पत्नी को ग्रहण करता है। अतः अपनी पत्नी के कथनानुसार आचरण करना पति के लिए परमावश्यक है।'' [27]

''पति को चाहिए वह पत्नी के मन की भावनाओं को भली–भांति समझकर तदनुकूल व्यवहार करे।'' [28]

''स्मृतिकारों ने वेदों की इस स्थापना का दुर्बल समर्थन किया हैं उनका विधान है कि पति सदा पत्नी की रक्षा में प्रयत्नशील रहे।'' [29]

पत्नी रूपा नारी की यह प्रतिष्ठा रामायण, महाभारत एवं परवर्ती संस्कृत साहित्य में यथावत् स्थापित रही है।

कालांतर में मुक्ति के लिए पुत्र की प्राप्ति की अभिलाषा इतनी तीव्र होने लगी कि पुत्र का जन्म निवारण के लिए विशेष धार्मिक कृत्यों का विधान किया जाने लगा। ऐतरेय ब्राह्मण में तो यहां तक कह दिया गया कि ''पत्नी एक साथी है, पुत्री एक विपति है, पुत्र सर्वोच्च स्वर्ग का प्रकाश है।'' [30] धीरे–धीरे यह धारणा इतनी बलवती हो गई कि रामायण के प्रारंभ में कन्या की प्राप्ति बड़ी तपस्या से होती हे, कहने वाले आदिकवि वाल्मीकि भी बाद में यह कह गए कि ''कन्या ही पिता के सभी दुःखों का कारण है।'' [31]

आश्चर्य है कि माता और पत्नी रूपा नारी के गुण गरिमा का आख्यान करने वाले ये विद्वान इस बात को कैसे भूल गए कि

कन्या रूप में संपोशित और यौवन प्राप्त नारी ही तो क्रमशः पत्नी और मातृ–पद की अधिकारिणी बन पाएगी।

संदर्भ

1. डॉ0 सूतदेव हंस, उपन्यासकार चतुरसेन के नारी पात्र, पृ.1
2. मनुस्मृति, मन्वर्थ मुक्तावली, श्लोक – 56, पृ.114
3. अयमाकाश : स्त्रिया पूर्यते, वृहदाख्यकोपनिषद्, पृ.143
4. शतपथ ब्राह्मण, पृ.14, 42, 45
5. रविन्द्र की नारी सम्बन्धी मान्यता का डॉ0 श्री कृष्ण लाल ने अपने 'मीराबई जीवन–चरित्र और
6. आलोचना' नामक ग्रंथ में उल्लेख किया है। यह वाक्य डॉ0 शैल रस्तोगी, हिन्दी उपन्यासों में नारी उपन्यासों में नारी, पृ.9 से उद्‌ध
7. सुमित्रानंदन पंत, ग्राम्या, पे08
8. शुद्ध कविता की खोज (परिशिष्ट), पे0 268
9. कबीर, कबीर ग्रंथावली, पृ.43
10. वहीं
11. वहीं
12. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, दोहा सं0 59 के पूर्व भाग से
13. वहीं, दोहा सं0 47
14. मतिराम ग्रंथावली, दोहा 128, पृ.450
15. बिहारी रत्नाकर, दोह सं0 334
16. मैथिलीशरण गुप्त, यशोधरा, पृ.15
17. नरेन्द्र शर्मा, द्रोपदी, पृ.6
18. जायदेस्त मधवन् त्सेदु योनि स्तदित त्वा युक्ता हरयो वहन्तु, ऋग्वेद – 3, 534
19. अर्थर्वेद–24, 2, 62
20. शौचन्ति जामयो यत्र विनष्यात्याषु तत्कुलम
    न शौचन्ति तु यत्रेता वर्धते तदिु सर्वदा। मनुस्मृति–3, 59
21. ऋग्वेद – 20, 55, 43, 44
22. न द्वितीयश्च साध्वीना क्वचिद् मर्तोयदिश्यते, मनुस्मृति – 5, 262
23. दराधीनस्तथा स्वर्ग : पितृणा मात्मन श्चहि, मनुस्मृति, 6, 28
24. स्त्रियां तुरोचमानाया, सर्व तद्रोचते कुलम
    तस्यां त्वरोचमानाया सर्वमेन न रोचते, मनुस्मृति, 3,62
25. यथा सिन्धुर्नदीना साम्राज्ये सुपुवे वृषा
    एवां त्व समाज्ञयेधि पत्युरस्त परेतथ। अर्थववेद – 24, 2, 43
26. पितृ भिर्भाताभश्चैत, पतिभिर्देवरैस्तथ पूज्या
27. 'रसा महनामि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः अथर्वेद, 2, 30
28. 'यतन्ते रक्षितु भार्या भर्तारो दुर्बला अपि। मनुस्मृति–9, 67
29. डॉ0 गजानन शर्मा, प्राचीन साहित्य में नारी, पृ.114
30. ऐतरेय ब्राह्मण–7, 23
31. कन्या – पितृत्व दुःख ही सर्वेशा मानकाक्षिणम्, बाल्मीकि रामायण, 7, 6, 20